Evincepub
Publishing

Evincepub Publishing
Parijat Extension, Bilaspur, Chhattisgarh 495001
First Published by Evincepub Publishing 2019
Copyright © Prashant paras 2019
All Rights Reserved.
ISBN:
Price:
This book has been published with all reasonable efforts taken to make the material error-free after the consent of the author. No part of this book shall be used, reproduced in any manner whatsoever without written permission from the author, except in the case of brief quotations embodied in critical articles and reviews. The Author of this book is solely responsible and liable for its content including but not limited to the views, representations, descriptions, statements, information, opinions and references ["Content"]. The Content of this book shall not constitute or be construed or deemed to reflect the opinion or expression of the Publisher or Editor. Neither the Publisher nor Editor endorse or approve the Content of this book or guarantee the reliability, accuracy or completeness of the Content published herein and do not make any representations or warranties of any kind, express or implied, including but not limited to the implied warranties of merchantability, fitness for a particular purpose. The Publisher and Editor shall not be liable whatsoever for any errors, omissions, whether such errors or omissions result from negligence, accident, or any other cause or claims for loss or damages of any kind, including without limitation, indirect or consequential loss or damage arising out of use, inability to use, or about the reliability, accuracy or sufficiency of the information contained in this book.

आज़ादी के पंख

लेखक - प्रशांत पारस

लेखक के बारे में

मेरा जन्म बिहार के दरभंगा जिले के भवानीपुर गाँव में हुआ। मैंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा दरभंगा के दयानंद एंग्लो वेदिक विद्यालय से पूरी की एवं यांत्रिक अभियांत्रिकी से अपनी स्नातक स्तरीय शिक्षा पश्चिम बंगाल के कोलकाता जिले से, पूर्ण करने में प्रयत्नशील हूँ। विद्यापति एवं बाबा नागार्जुन जैसे महाकवि के जन्म स्थल पर जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त कर मिथिला के कण-कण में रचे संगीत के शब्दों को तोड़कर अपनी काव्य रचता हूँ।

"शौक़ रखता हूं दो नावों पर सवार होने

अक्सर डूबने वाले ही किनारे की तलाश करते है"

कविता की रचना का सारा श्रेय मैं मुझसे जुड़े सारे व्यक्तियों एवं उनके व्यतित्व को देता हूँ, मैं अपने माता-पिता एवं अपने परिवार के सभी सदस्यों को सहयोग देने के लिए उनका आभारी हूँ।

पुस्तक के बारे में

आज़ादी के पँख को मैंने अपनी जीवन की उतार चढ़ाव की मेज पर बैठ कर अपनी अनुभव की स्याही से तैयार किया।

जिसके कागज को एकजुट करने में मेरे माता पिता भाई बहन एवं मेरे जीवन से जुड़े सभी व्यक्तियों का सहयोग रहा है। हौसलों के शब्दों से रची यह काव्य संग्रह पाठकों को अपने लक्ष्य को पाने में सहयोग करने के साथ-साथ एक नई साहस को जागृत करेगी।

इसकी हर कविता की हर पंक्ति में आप गोते लगाकर अर्थों के अंबार के साथ वापस आएंगे। इस पुस्तक में जहाँ मैंने सैनिकों से पूछे हर प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न किया है वही होली जैसे महापर्व की वैशाखी लेकर मैंने शत्रुता मिटाने एवं मैंने ग़रीबी की ओर भी ध्यान आकर्षित की है

एक नन्ही जान का सहारा लेकर मैंने बटवारा के संबंध में भी प्रश्न पूछने की कोशिश की है और जहाँ तक वीर-रस की कविताएं है वो पाठकों के नज़रिए से अपने अर्थ स्पष्ट करेगी।

काव्य संग्रह

क्र.	विषय सूची	पेज
1	उत्तर मैं	
2	गीत कौन सी गाऊँ मैं	
3	गरीबी की मरीज़	
4	गगन के वाशिंदे	
5	गिर पड़ा तो क्यों रोता है	
6	माँ मुझे आने दो	
7	देख मेरे भाई कलियुग आया	
8	मैंने देखा है	
9	आज़ादी के पंख	
10	मेरी आवाज	
11	तुम यही पर हो	
12	होली है इसी अवणि पर	
13	किसने रोका है?	
14	अबोध स्मृति है बचपन	
15	आज़ादी की वह रात दीवानी	
16	राह नया पाता हूँ	
17	पलट देख इंसान तू	

18 मिट्टी का खिलौना
19 कब्र पर घर
20 आँधी
21 चला मानव दौड़ लगाने
22 बाँटा जो क्या तुम्हारा था
23 बटोही अब जिया नहीं जाता
24 सावन की गरिमा
25 अकेली राह पर
26 जो नया है वो लोगों में बस गया है
27 अमिय प्रसून

उत्तर मैं

गोरी के पथिक नजरों की विडंबना का,
स्याह रजनी में हो इंतज़ार जिस सजना का,
उत्तर मैं

हज़ार सपनों के भार का,नन्हें कंधों के अभिमान का,
तुतली स्वर में पूछे हर सवाल का,
उत्तर मैं

सूनी कलाई, रेशम के तार का,वादा अबकी बार का,
चंचल तरसी नजरों के इंतजार का, भाई-बहन के प्यार का,
उत्तर मैं

पिता के संस्कार का,मेरे पत्र से पूछे हर सवाल का,
ममता के दुलार का,धरा पर हुए नेत्रजल के प्रहार का,
उत्तर मैं

ईन सबसे कहीं ऊपर
देश की विश्वास का, हर कल में आज का,
संस्कृति की साज का,इतिहास के लाज का
मैं रक्षक हूँ भारत के भूत,भविष्य और वर्तमान का
मैं एक नागरिक हूँ,मैं एक सैनिक हुँ

गीत कौन सी गाऊँ मैं

किसके स्वर से स्वर मिलाऊँ मैं,
किस पर्वत पर राह बनाऊँ मैं,
न आगे कोई खड़ा है,
न ही पीछे कोई दिख रहा है,
हार किससे मानूँ मैं,
जीत किससे ठानु मैं,
गीत कौन सी गाऊँ मैं।

अपनी बिथा किसे सुनाऊँ मैं,
अपना पन्था किसे दिखाऊँ मैं,
खड़ा हूँ टेढ़ी-मेढ़ी राह पर,
लिख रहा हूँ काल के कपाल पर,
दुःख की दागी कैसे मिटाऊँ मैं,
गीत कौन सी गाऊँ मैं।

आगे कोई ऐसा नहीं खड़ा है
जो मुझे राह दिखाए,
जिंदगी के टेढ़ी मेढ़ी राह पर,
अपने साथ मुझे बढ़ाए,
अपना विश्वास किस पर जताऊँ मैं,
गीत कौन सी गाऊँ मैं।

करीब से नहीं देख पाया हूँ
जिंदगी का दर्पण,
क्योंकि उम्र है मेरी बचपन,
अपनी यह लेख किसे सुनाऊँ मैं,
गीत कौन सी गाऊँ मैं।

गरीबी की मरीज

बड़े-बड़े इमारतों के बीच,
गुहार लगाती इक मरीज,
मरीज किसी बीमारी का नहीं,
गरीबी ही उसकी बीमारी सही,
दिया उसे किसी ने न भीख,
बड़े-बड़े इमारतों के बीच।

हाथ फैला वह लोगों से माँग रहा,
किस्मत को अपने धिक्कार रहा,
ईमारत से ईमारत,दुकान से दुकान,
दिनभर उसका एक ही काम,
पर मिलता न उसे भीख,
बड़े-बड़े इमारतों के बीच।

शाम हर रोज उसके जिंदगी में आता,
सवेरा न कभी उसको भाता,
दिन तो रोटी की तलाश में बीत जाता,
पर रात बीतता हमेशा पेट सहलाता,
इमारतों के आगे पड़े झूठन पर भी,
हो जाती कुत्तों से मुठभेड़,
रोटी कुत्तें उनके हाथों से लेते खींच,
बड़े-बड़े इमारतों के बीच।

गगन के वाशिंदे

बंद हो पिँजरे में हम,
आजादी के सपने जीते,
अपनी मीठी स्वर से हम,
इंसानों पर भी रौब जमा जाते,
हम है गगन के वाशिंदे,,
कहलाते है हम परिंदे।

मग्न हो अपने धुन में,
आसमान में हम उड़ते,
बहती धारा चीर के,
हम नदी में मोती चुगते,
न अल्लाह, न भगवान
हम हैं मंजिल के बंदे,
हम हैं गगन के वाशिंदे,
कहलाते है हम परिँदे।

सागर से सागर, देश से परदेश,
मंजिल की तलाश में उड़ते जाते,
या तो मंजिल मिलती,
या मौत को गले लगा लेते,
लक्ष्य के लिए ही जीते हम,
लक्ष्य के लिए ही कूर्बानी देते,
हम है गगन के वाशिंदे, कहलाते है हम परिंदे।

गिर पड़ा तो क्यों रोता है

देर होती है नद को,
सागर से मिल जाने में,
बूँद-बूँद व्यर्थ नहीं होता,
सूरज की तप से सूख जाने में,
कोटर से पंछी निकलता है,
क्षितिज में समा जाने को,
व्यर्थ नहीं करता वह जीवन,
साहस की सीमा लाँघ जाने में

वीर तू क्यों डरा है,
सहम कर क्यों मौन खड़ा है,
जब तक न मिले मंज़िल तुझे,
तब तक न तेरे कदमों को विराम है
नव किरण है ये नया नाम है
नई आगाज है ये नया अंजाम है

गिर पड़ा तो क्या रोता है
उठ दौड़ देख क्या होता है
तेरे हौसले से हालात का वक्ष,
छलनी-छलनी होता है
तू जोर लगाता होती सुबह
तू जोर लगाता होती शाम है
नई आगाज ये नया अंजाम है

माँ मुझे आने दो

मुझे हक है चहचहाने का,
मुझे हक है इतराने का,
ममता की छांव में दुलारने दो,
माँ एक बार आने दो।

भूल गई तुम रजिया सुल्तान,झाँसी की रानी,
माँ लिख सकती हूँ इतिहास के पन्नों पर
मैं भी अपनी कहानी,
खुले आसमाँ में आजादी के पंख फैला लेने दे मुझको,
क्षितिज का मिलन देख लेने दो,
माँ मुझे आने दो।

कन्या भ्रूण हत्या का छोड़ दो ईरादा,
प्यार करुंगी मैं तुम्हें भाइयों से ज्यादा,
पंछियों की तरह मुझे भी आकाश में आजादी के पंख फरफराने दो,
राधा-सीता मुझे भी कहलाने दो,
माँ मुझे आने दो।

देख मेरे भाई कलियुग आया

देख मेरे भाई कलियुग आया
इंसानों ने अपना मर्यादा भुलाया,
अमीरों ने अपना राज चलाया,
गरीबों को रोटी के लिये तरसाया,
देख मेरे भाई कलियुग आया।

नेताओं ने अपना राज चलाया,
गरीबों को रोटी के लिये तरसाया,
राजनीति का पाठ पढ़ाया,
महंगाई को आसमान में पहुँचाया,
देख मेरे भाई कलियुग आया।

बेटे माँ -बाप पर कर रहे अत्याचार,
मर्यादा पुरुषोत्तम के नाम को मिट्टी में मिलाया,
लोग झूठ का ले रहे अब सहारा,
सच को दुनिया में मिटाया,
देख मेरे भाई कलियुग आया।
लोग बन रहे स्वार्थी,
जला रहे रिश्तों की अर्थी,
क्या राम,क्या कृष्णा,क्या विष्णु,
वेद को दुनिया में झुठलाया,
देख मेरे भाई कलियुग आया

मैंने देखा है

पेड़ो से फूल निकलते,
तितलियाँ उनपर मंडराते,
भौंरों को उनपर उड़ते,
ख़ुशी से फूल को ऐंठते,
मैंने देखा है।

लगा था एकमात्र फूल पेड़ पर,
खुशी से झूम रहा था पेड़ भी,
पेड़ को इतराते,
फूल को खिलखिलाते,
मैंने देखा है।

आखिर किसकी नजर,
लगी इस ख़ुशी को,
आ अचानक एक दिन,
निचे वो फूल गिरा,
फूल से बिछड़ने पर,
पेड़ का दू:ख,
मैंने देखा है।

पैँरो तले रौंदा वो फूल जाने लगा,
अपनी बदकिस्मती पर,
रोते फूल को,
मैंने देखा है।

अगली सुबह हुई,
निकली एक फूल नयी,
पेड़ सोच बैठा था नहीं हसूँगा,
दोबारा कभी,
क्योंकि फूल से बिछड़ने पर,
खुद का दुख,
मैंने देखा है।

आज़ादी के पंख

खुले आसमाँ में आजादी के पंख,
फरफरा लेने दे मुझको,
कठपुतली बने महीनों बीत गये,
अब तो आकाश का साफा बांध,
उड़ लेने दे मुझको
खुले आसमाँ में आजादी के पंख
फरफरा लेने दे मुझको,

पेड़ों के झुनझुने,
सुन लेने दे मुझको,
साहस की हर अरदिल
जीत लेने दे मुझको,
क्षितिज का मिलन,
देख लेने दे मुझको,
खुले आसमाँ में आजादी के पंख,
फरफरा लेने दे मुझको,

कुछ हरी, कुछ पिली,कुछ नीली,
वो देखो उड़ रही एक और उजली,
उनके बीच जाकर, दोस्ती का संबंध,
बढ़ा लेने दे मुझको
खुले आसमाँ में आजादी के पंख,
फरफरा लेने दे मुझको

कभी दांये,कभी बांये,
उड़ लेने दे,मस्त गगन में मुझको,
खुले आसमाँ में आजादी के पंख,
फरफरा लेने दे मुझको

मेरी आवाज़

चुभन से भरी,
अपनी दुनियाँ में मुग्ध,
ह्रदय को शीतल करने के लिए,
कुछ तुकबंद पंक्तियों का सहारा लिए,
चला जा रहा था,
अचानक किसी ने पुकारा
की कितनी यातना से भरी है,
तेरी आवाज़।

यह आवाज़ किसी मानव का नहीं,
बल्कि मेरे ही सामान
उस प्रशांत का था,
जो हमेशा मेरा साथ निभाती है,
भले ही सुर गलत थे
ताल नहीं मिल रहे थे
फिर भी मेरे चंचल ह्रदय और मन को,
एक नया यौवन दे रही थी,
मेरी आवाज़।

आज मेरे स्वर कभी मध्य सप्तक,
तो कभी तार सप्तक,
मेरे मुख ने तो सिर्फ साथ,
निभाने का काम किया था,

क्योंकि स्वर तो सीधा
वक्ष से उत्पन्न हो रहे थे,
मित्र तो मित्र शत्रु के ह्रदय में भी,
प्रलय ला देने वाली थी
मेरी आवाज़।

तुम कही पर हो

कण-कण सम्पन्न राग से तुम्हारे,
अनन्त आकाश सम लोचन भाग तुम्हारे,
अकिंचन की जिजिविषा का सम्पदा हो,
आभास अंकुरित मानुज जैसे आप ही ठगा हो,
गुल में हो,गगन में हो,ज़मीं पर हो,तुम कहीं पर हो।

प्रतिबिम्ब से प्रीत लगी,दिनकर जगा प्रतिबिम्ब जगी,
मीरा ने वह कौतुक दिखलाया प्रभु प्रेम का दीप जलाया,
रत्ना रूपी रत्नों ने जग को ऐसा सिख सिखलाया,
नारी को भी नहीं व्यापे माया,

वैरागी हुआ रागी तुलसी,प्रभु प्रेम का सब्यसाची तुलसी,
दर्श तुम्हारे प्रथम हुए तब अकिंचन जग मैं पाया हूँ,
हृदय की लीक पर समीप तुम्हारे आया हुँ
वैकुण्ठ में हो,धरा पर हो,मैं जहाँ पर हुँ वहाँ पर हो

होली हैं इसी अवनि पर

निमंत्रण देता फाल्गुन आया

साथ अपने सतरंगी बौछारें लाया

मोर्चा संभाले खड़ी चतुरंगिणी धरा पर

लकीरें मिटी जब हुई गुलाल से समर

होली है इसी अवनि पर

बृज में वैकुण्ठ बसा जन-जन में घनश्याम

विजय होगी प्रलय पर नित जो जपे हरि नाम।

अंधकार है जिनके जीवन में

आओ उनको रंगों में विलय कर दें

विनाश होगा बुरी शक्तियों का

आओ हुँकार एकता की श्रृंखला में भर दें

छोटे के ललाट पर गुलाल,श्रेष्ठ के चरण अबीर,

हर्ष बढ़ा दुःख बटा, सबके रग में एक रुधिर।

कठोर हो चुका हर मानव

नरम कर दूँ हृदय रंगों से सींचकर

बट चुका जीवन खो गयी खुशियाँ

चित्रकार रचेगा संसार एक तस्वीर पर

होली का त्योहार है वरदान,आभार जननी पर

देवता, परलोक को निमंत्रण,होली है इसी अवनि पर

किसने रोका है?

कर हौसलों को दुरुस्त

उड़ान भरो मंज़िल की ओर

कल तो झांसा है

आज ही तो मौक़ा है

क्या कभी लहरों को मचलने से किनारों ने रोका है ?

पथ कैसा भी हो मत घबराओ तुम

मानवता का उद्धार हो,परिवर्त्तन ऐसा लाओ तुम

अच्छाई की जीत भी तो बुराई से है

गीता का उत्पति भी तो महाभारत की लड़ाई से है

जीवन,मृत्यु,सुख,दुख,धन

ये सब तो सिर्फ हवा का झरोखा है

क्या कभी सूरज को निकलने से अंधकारों ने रोका है?

न युद्ध से हो,न हथियार से हो

हिन्द की जयकार सर्वप्रथम आचार, विचार 'औ' संस्कार से हो,

पग-पग हो यदि लंका

राम तो सिर्फ एक होता है

लकीर की लड़ाई से सिर्फ जीवन मरेगा

जो प्रेम से, एकता से रहे तो देखो जग क्या होता है

क्या कभी चाँद को गगन में सैर करने से सितारों ने रोका है?

अबोध स्मृति है बचपन

निश्छल प्रेम फ़रमाता अपने मन से,
अपने धुन में मग्न रहता है मन का राजा,
पल-पल रूठता पल-पल हँसता,
तुतली स्वर मीठी बोल का महाराजा,
सरस्वती जिसके जिह्वा पर विराजमान,
वह अबोध स्मृति है बचपन,

हाथ मिलाओ तो प्यारी सी मुस्कान,
न मंजिल का पता,
न ही कोई अरमान,
खिलखिलाहट की पहचान,
अबोध स्मृति है बचपन।

लक्ष्य अगर दूर हो,
तो न ले थकावट का नाम,
दे एक अबोध पहचान,
प्यार का प्यासा,
लिए प्यार की पहचान,
अबोध स्मृति है बचपन।

आज़ादी की वह रात दीवानी

आज़ादी की वह रात दीवानी,
जब वीरों ने दी कुर्बानी,
भारत में क्रांति की लहर जगमगाई,
भारत के वीर आज़ादी के दीवाने,
अंग्रेजों के सामने खरे थे छाती ताने,
जय हिन्द का लग रहा था नारा,
भारत में लहरा उठा था तिरंगा प्यारा,
भारत माता की चरणों में,
चल पड़े थे सब कुर्बानी देने,
सत्य,अहिंसा के बल पड़,
अंग्रेजों से लोहा लेने,
वीरों की हिम्मत, एकता देखकर,
अंग्रेजों ने जब हर मानी,
लालकिला पर लहरा उठा तिरंगा,
याद आ पड़े भगत सिंह,नेताजी,
सुखदेव,आज़ाद की कुर्बानी,
भारत वीरों ने दी इनको सलामी,
आज़ादी की वह रात दीवानी,
भगत सिंह,नेताजी,गाँधीजी,
सुखदेव,आज़ाद की कुर्बानी

नया पाता हूँ

चलते-चलते जब पाँव थक जाते है
परिश्रम सारे जब निरर्थक से नज़र आते है
अडिग साहस से एक और बार जोर लगाता हूँ
राह नया पाता हूँ

अंत हो कहानी का या फिर
प्रभा से अंत हुई स्वप्न की तरुणाई का
आरम्भ एक नया लिखता जाता हूँ
राह नया पाता हूँ

व्यंग्य जो हो मेरे जीवन पर
प्रभाव नहीं सब्यसाची के शरासन पर
अपनी रणनीति में सुधार लाता हूँ
राह नया पाता हूँ

हार थी जहाँ वहां हार मिली है
हो सकता है ईश्वर ने हौसले की परीक्षा ली है
आने वाले जो लोग खड़े है
उनका पथ आसान करता जाता हूँ
राह नया पाता हूं
तो चलता जाता हूँ

पलट देख इंसान तू

पलट देख इंसान तू,

क्यों बना है हैवान तू,

भूल तू तेरी खातिर,

कितनों ने कुर्बानी दी है,

दिन-रात सब एक कर,

तेरी पिपासा काम की है,

क्या इस सब से है अनजान तू,

भूल गया तू वो दो परछाई,

जो छाँव बन हमेशा,

तेरे संग रहती आई,

तेरे एक 'आह' से जिसके,

नयन भींग जाते थे.

तेरी तरक्की के खातिर,

जो किसी के भी पैर लोट जाते थे,

क्यों बना है कृतघ्र तू,

पलट देख इंसान तू,

क्यों बना है हैवान तू।

अरे ओ जरायुज,

क्या तू घमंड का इतना है सव्यसाची,

भूल गया तू उसे,

जिसने अपने पेट काट तुझे पाले है,

गैरों से प्रेम,

अपनों से क्यों तू,

दुश्मनी के लकीर ताने है,

कब बनेगा इंसान तू,

पलट देख इंसान तू,

क्यों बना है हैवान तू।

मिट्टी का खिलौना

एक दिन पूछा मैंने मिट्टी के खिलौने से
अस्तित्व कहाँ तेरी
बस तरह-तरह के आकार धरता है
चंद क्षणों के जीवन मे मानुज को
आनंदित कर पानी में जा घुलता है

खिलौने ने कहा
अस्तित्व जहाँ तेरी वहीं मेरी
तू भी उसी मिट्टी में पलता है
उसी मिट्टी में घुलता है
बस फर्क है कि
तूने जीवन का मोल न पहचाना
सीखा अपनों से अपनों को गिराना

मुझे बनाने वाले ने जैसा बनाया, जो दिया
जब तक दिया
उसी में मोद मनाता हूँ

कब्र पर घर

जिनके वक्ष पर यह घर खड़ा
छोड़ आए थे जो जग में भला-बुरा
जिनके अपनों ने कब्र तक बेच दिए
जिनका स्वप्न रह गया अधूरा

आज वो मेरी दीवारें लाँघते हैं
मुझसे अपनी इच्छाओं की पूर्ति माँगते है
मैं इनसे डरना चाहता हूँ पर डर नहीं पाता
लेकिन इनके हावी होने से मैं जग का सामना कर नहीं पाता

यहाँ हर रोज एक जमावड़ा लगता है
हर कोई अपनी कहता है, पर एक बुजुर्ग दंपति
कतार में सबसे पीछे आते है
और अंत मे मुझसे अपने बेटों की भलाई पूछ जाते हैं

इन्हें इस तरह ठगकर मुझसे रहा नहीं जाता
पर जिनके बेटों ने कब्र तक बेच दिए उन्हें कौन चाहता
यहाँ हर एक को मैं एक झूठी कहानी सुनाता हूँ
जी हाँ शब्दों का सौदागर हूँ इन्हें हौसला बेचकर जाता हूँ

पर इनसे एक सीख लेकर मैंने इस घर मे
बसेरा जमा लिया है
यहाँ रह रहे उल्लू,साँप, गिरगिट और
यहाँ तक कि चींटियों ने भी
मुझसे अपने कब्र की जमीन का सौदा किया है

आँधी

सुलह के समुद्र में
अहं का ज्वार जगा
परिभव की तट से
आवेश का लहर उठा
विवेक के गगन में
जनश्रुतियों का बादल अड़ा
मर्यादा की दीवारों को भेदकर
आँधी आई मेरे घर
ले गयी एक जाल समेटकर

चला मानव दौड़ लगाने

चला मानव दौड़ लगाने,

अन्याय को इस दुनिया से मिटाने,

सत्य -प्रेम की राह दिखाने,

अहिंसा की राह अपनाने,

चला मानव दौड़ लगाने

जिंदगी में उसने सिर्फ दुःख ही दुःख झेले हैं,

लोगों की हँसी और किलकारियाँ भी इसे सह लेने हैं,

जिंदगी का नाम बढ़ना ही उसने समझा है,

बीती राह भुलाने,

चला मानव दौड़ लगाने।

जिंदगी का मतलब समझा उसने काँटा हैं,

जो एक बार चुभा और वर्षों तक उस दर्द को संजोगा है,

जिसपर किया उसने ज्यादा विश्वास,

लगाई जिससे उसने आस,

दिया उसने ही बड़ा आघात,

अकेले इस दुनिया को राह दिखने,

चला मानव दौड़ लगाने।

बाँटा जो क्या तुम्हारा था

सब लोग दौड़ रहे थे
उत्साह-सा आ गया था बच्चे बूढ़े और नौजवानों में
ख़ुशी की लहर दौड़ रही थी एक बूढ़े की संतानों में
कुछ लोग उत्सुक थे,कुछ स्वास पाकर आते
चंद पसीने से तर-बतर,पंच मूँछों को एठियाते
सहसा एक नज़र मेरी बूढ़े की पोती पर पड़ी
जो कुछ सवाल लिए थी खड़ी
शायद ये कि
ये नज़ारा क्या है
ये बंटवारा क्या है
जो चाचा-पापा साथ खाते अब न खा पाएंगे
हाथ न देंगे एक दूसरे को मझधार में उलझते चले जाएंगे
"आधा तेरा आधा मेरा
एक कमरा जो बचा बापू वो तेरा"
खेत, कुआँ, पेड़ आदि जो जीने का सहारा था
बाँटा जो क्या वो तुम्हारा था ?

पता था उसे की उत्तर न मिलेगा
क्योंकि ये उत्तर न तो उसके पिता के पास होगा
और न उसके पिता के पिता पास
इसीलिए मौन होकर एक निष्कर्ष लिए खड़ी थी
"ये रीत मुझे भी अपनानी है
मेरी रुधिर के जितने अंश होंगे
उतने हिस्सो में ये सम्पति बाँटकर जानी है"

बटोही अब जिया नहीं जाता

पावस में धरा कठोर पड़ी है
जान पड़ता है मेघ और वसुधा में समर छिड़ी है
प्यासा देख खेत को घूँट भी पानी पिया नहीं जाता
बटोही अब जिया नहीं जाता

जो आई न नीर धरा पर फसल न लहराएंगे
पानी पीकर सोते थे जो प्यासे कब तक रह पाएँगे
भूखे-प्यासे जग की कल्पना किया नहीं जाता
बटोही अब जिया नहीं जाता

धरा के धी को मुर्छित कैसे देख पाउँगा
अपने शोणित से खेत को कब तक सींच पाऊंगा
एक बूँद पानी शेष, निज संतान और फ़सल मुझे रहे देख
यह बंटवारा मुझसे किया नहीं जाता
बटोही अब जिया नहीं जाता

जो व्यर्थ करते लहू लालसा,द्वेष,धन की दीवारों पर
कह देना कुछ कतरा व्यर्थ करें जीवन चक्र के हथियारों पर
क्या खाएंगे जो लगाते थे मेरे मेहनताने का दर
आए सब फ़सल सींचे प्रस्तर बनी अवनि पर
आप में मग्न दुनिया ने तोड़ लिया हमसे नाता
बटोही अब जिया नहीं जाता

सावन की गरिमा

पूरब,पश्चिम,उत्तर,दक्षिण,

चारों तरफ जब घनघोर घटा छाती,

अंधकार हो जाता जग में सूरज की किरणें भी बलखाती,

काले-काले रंग रूप में आसमान में बदल मंडराता,

सावन आने के साथ ही,

दिव्य बूंदो के साथ ही बरस जाता,

हरियाली हो जाती जग में,

निकल मेंढक तालाब से टर्र-टर्राता,

फसल की हरियाली देख किसान भी खिलखिलाता,

सर ऊपर किसान करता बदल का शुक्रिया अदा,

यह होता है बादल का जादू,

यह होती है सावन की गरिमा,

जब खुश हो मस्त गगन में,

बादल मंडराता

अकेली राह पर

जिंदगी की उस अकेली राह पर
मन में विश्वास लिए मैं खड़ा रहा

जब चलने से डर लगता था
खड़ा होकर डरना सीख लिया
जब दौड़ने से डर लगता था
तब कदम बढ़ा कर चलना सीख लिया
प्रथम उद्देश्य मिलने से जीवन शेष होने तक
अतुल्य साहस लिए मैं डटा रहा
जिंदगी की उस अकेली राह पर
मन मे विश्वास लिए मैं खड़ा रहा

कुछ लोग जो साथ आते थे
अब मन मे कभी गा जाते हैं
कभी जब ऊँगली थाम के सीखता था मैं
अब पथ के रोड़े भी सबक सिखला जाते है
क्षण-क्षण के पन्नों को जोड़कर
अनुभव की पुस्तक रचता रहा
जिंदगी की उस अकेली राह पर
मन मे विश्वास लिए मैं खड़ा रहा

आना-जाना एक है उत्सव
अमिट सत्य जानकर भी लक्ष्य पाकर
अपनी जीत का मोद मनाना एक महोत्सव
कही जीत कर, कही हार कर
हर पल आप ही उलझ कर सुलझता रहा
जिंदगी की अकेली राह पर
मन मे विश्वास लिए मैं खड़ा रहा

जो नया हैं वो लोगों में बस गया हैं

जीवन-रथ पर, प्रगति के पथ पर
खेरा के सदन से लेकर समर भू पर
अपने मोहपाश से जग को रच गया है
जो नया है वो लोगों मे बस गया है

यह निशान है प्रबल ख्याति का
कारक है यह रिश्तों में अराती का
माहुर से बाज़ार सज गया है
जो नया है वो लोगों मे बस गया है

माता-पिता, गुरुजन से जो ज्ञान मिला वो पराया है
दूजे की संस्कृति को सर्वोत्तम मान अपनाया है
मानवता लालसा के उदर में पच गया है
जो नया है वो लोगों मे बस गया है

पंचभूत फँसा शोध जाल में
भविष्य का अंत हो रहा वर्तमान की तीव्र चाल में
हिम की बेटियों के जगह रसायन-वेग धरा को सींच गया है
जो नया है वो लोगों में बस गया है

ये चक्र यूँ चलता जाएगा
नये-पुराने के खेल में जग छलता जायेगा
समाहार निष्कर्ष होगा न मानव के अधीन
गुफाओं में अपने खिलौनों से डर बसेगा एक दिन

आज हमारा कल इतिहास होने को चल गया है
जो नया है वो लोगों में बस गया है

अमिय प्रसून

क्षुधा हो लक्ष्य की
या मिथ्या के सरि में खोज सत्य की

हो क्षुधा दूजे से आस की
तलाश हो यदि खोये विश्वास की

निरंतर हार से, जग की ललकार से
किये निगाहें गगन पर
हो इंतज़ार हौसलें के बरसात की

मंज़िल निकट है पर राह में अड़चन प्रकट है
आवेग सब मे एक है पर लक्ष्य पायेगा वही जिसमें क्षुधा तेज है

चीर क्षुधा सागर को मानव जो कदम बढ़ाएगा
विश्व विजेता, अमर-देह वह अमिय प्रसून कहलायेगा